University Grants Commission, New Delhi Recognized Journal No. 41311
ISSN: Print: 2347-5021 www.research-chronicler.com ISSN: Online: 2347-503X

बिहार का सामाजिक तथा राजनीतिक परिदृश्यः एक अध्ययन

डॉ सिमा कुमारी

असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, पंडित यमुना कार्यी कॉलेज, ढोली, मुजफ्फरपुर

1934 से 1937 के बिहार के सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्यों को सही परिदृश्य में समझने के लिए हमें यहाँ की भूमि, जनसंख्या, आर्थिक एंव राजनैतिक अवस्थाओं तथा उन सामाजिक एंव वैचारिक संस्थाओं एंव संरचनाओं को समझना होगा जिनकी पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय आन्दोलन उभरा। 20वीं शताब्दी के शुरूआत में बिहार ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अन्तर्गत एक अत्यन्त पीछड़ा वर्ग का प्रान्त था। लगभग पूर्व रूप से खेती पर आधारित यह प्रान्त सामाजिक तौर पर गहरी जटिलताओं एवं एक विदेशों को अपने गर्भ में छुपाए हुए था, यद्यपि उपर से सब कुछ ठीक–ठाक दिखाई पड़ रहा था। ब्रिटिश उपनिवेशवाद ने परम्परागत सामाजिक प्रथाओं एंव आर्थिक संरचनाओं का दोहन अपने हित में करते हुए बिहार की सामाजिक एंव आर्थिक संरचनाओं में इस तरह का सुधार किया था कि उपर से देखने पर समाज मे ंनवीन सुधार दृष्टिगोचर हो रहे थे, परन्तु समाज का वास्तविक तौर पर नवीनीकरण नहीं हुआ था।

कृषि पर आधारित समाज मुख्यतः धनी एवं गरीबी किसान वर्गो में बंटकर आकाश–पताल की दूरी तथा असमानता लिए हुआ था इतना अधिक कि परम्परागत समाज की कड़ी को तोड़ने के लिए दोनों छोरों का संघर्ष या पारस्परिक सहयोग बहुत दूर की बात थी। इसी पृष्ठभूमि में ब्रिटिश साम्राज्यवाद बिना किसी प्रत्यक्ष एंव आसन्न खतरा के अच्छी तरह बिहार का समाजिक एंव आर्थिक दोहन कर रहा था।[1] जैसे जैसे बिहार की जनसंख्या बढ़ी और जमीन पर उसका दवाब बढा तो उसके अनेक आर्थिक एंव सामाजिक परिणाम उभरे। इसी पृष्ठभूमि में 1917 से 1939 तक अनेक आर्थिक एवं राजनैतिक उथल–पुथल से बिहार गुजरा एवं ब्रिटिश साम्राज्यवाद तथा उनके द्वारा प्रेषित पूंजीवाद ने यथासंभव उससे अपने को सुरक्षित रखने का भरपूर प्रयास किया। इसी दौरान बिहार धीरे–धीरे काँग्रेस तथा महात्मा गाँधी के सम्पर्क में आया राष्ट्रीय आन्दोलन की हवा से प्रभावित हुआ। ब्रिटिश उपनिवेशवाद का असली चेहरा बेनकाब होने लगा। तथापि ब्रिटिश उपनिवेशवाद से पालित पोषित सामाजिक संरचना एंव प्रकृति ने बिहार प्रान्त पर बहुत दिनों तक अपना प्रभाव डाले रखा। बिहार का राष्ट्रीय आन्दोलन साम्राज्यवादी एवं उपनिवेशवादी प्रवृत्तियों को ओट में सामन्तवादी शक्तियों से भी प्रभावित हुआ। राष्ट्रीय नेताओं ने उन प्रवृत्तियों से लड़ने के लिए जो कदम उठाये थे वे मुख्यतः महात्मा गाँधी के नेतृत्व में पारस्परिक सहयोग एवं अहिंसा की नीति पर आधारित थे। तब की विश्व राजनीति मे ंउभरी रहे वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त को

बिहार के कांग्रेसी नेताओं ने नहीं स्वीकारा था। फिर भी बिहार में पनपे औपनिवेशिक शासन ने उन अनेक तत्वों एंव कारणों को पैदा किया था जो वर्ग संघर्ष की पर्याप्त सामग्री जुटाते थे। उन तत्वों ने भी अपनी अपनी भूमिकाएँ अदा की थी राष्ट्रीय आन्दोलन में अध्ययन में ली गई सारी बातों की पर्याप्त समझ के लिए यह आवश्यक है कि तात्कालीन बिहार की सामाजिक संरचना को जो मुख्यतः कृषि पर आधारित थी, थोड़ा विस्तार से आंका एवं परखा जाए।

जैसा कि उपर वर्णित है, तब का बिहार मुख्य तौर पर कृषि पर आधारित समाज था। लगभग 97 प्रतिशत जनता गॉवों में रहती थी और उनकी जीविका का मुख्याधार खेती तथा उससे सम्बन्धित अति लघु पैमाने पर पुश्तैनी उद्योग थे। मोटे तौर पर समाज का विभाजन इस प्रकार था सबसे उपर गॉवों में या कई गॉवाों को मिलाकर कुछ बड़े तथा अनेक छोटे–छोटे जमींदार थे। फिर धनी किसान थे। परन्तु उनकी संख्या काफी कम थी। दूसरे स्तर पर मध्यम वर्गीय किसान थे जो अपनी भूमि पर स्वयं जाकर खेती करते थे और साथ ही साथ कृषि मजदूरों को नगद या रकम देकर खेती करवाते थे। उनके नीचे के स्तर पर वे गरीब किसान थे जिनके पास या तो बिल्कुल ही जमीन नहीं थी या फिर अगर थोड़ी बहुत जमीन थी तो उनका उसके आधार पर पूरी तरह गुजर बसर नहीं होता था और उन्हें अपने जीवन निर्वाह के लिए या तो मध्यवर्गीय किसानों या छोटे एवं बडे जमींदारों के यहाँ खेती का काम करना होता था और उन्हें रोज काम की मजदूरी के बतौर नकद पैसा या अनाज मिलता था।[2]

जातीय आधार पर गरीब किसान मुख्यतः समाज के नीचले पायदान पर स्थित जातियों में से आते थे। जैसे वे या तो हिन्दू वर्ग के हरिजन, मल्लाह, कुम्हार, कुर्मी, या संक्षेप में, ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य को छोड़कर शूद्रों की श्रेणी में से आते थे और मुस्लिम वर्ग के अधिकांश लोग होते थे जो अधिक दृष्टिकोण से सम्पन्न नहीं थे। ये गरीब किसान आर्थिक दृष्टिकोण से इतने सम्पन्न नहीं होते थे कि वे अपनी स्वयं की खेती पर निर्भर रह सके और इसीलिए उन्हें श्रम करके अपना तथा अपने परिवार का भरण पोषण करना पड़ता था। ऐसे किसानों की भी कई श्रेणियां थी। कुछ तो मात्र कृषि मजदूर थे। उन्हें अपने तथा अपने परिवार के सदस्यों के श्रम बेचने पर ही जीवित रहने का एकमात्र उपाय था।

इनसे उपर बटाईदार कृषि श्रमिक थे जो धनी किसानों से बटाई पर खेत लेते थे, उन पर श्रम करते थे और अपनी जीविका चलाते थ। उनसे उपर वैसे छोटे–छोटे किसानों की श्रेणी थी जिनके पास कुछ अपनी जमीन होती थी और उतनी नहीं कि वे उन पर ही काम करके अपनी आजीविका का पूरा बन्दोवस्त कर सके। अतः वे कुछ भूमि बटाई पर लेकर उन पर श्रम करते थे या कुछ श्रम दूसरों से भी करवाते थे। उनसे उपर के छोटे–छोटे किसान थे जिनके पास इतनी जमीन न होती थी कि वे अपनी ही भूमि पर काम करके अपने परिवार का भरण पोषण किसी तरह

कर सकें अतः विशेष आवश्यकता होने पर ये धनी किसानों, छोटे जमींदारों या बडे जमींदार या साहूकार से कर्ज लेते थे। उनसे उपर सुखी एवं सम्पन्न किसान थे जिनके पास पर्याप्त जमीन थी। वे या तो स्वयं खेती कार्य का निगरानी करते थे या उसके लिए गॉव के ही किसी व्यक्ति विशेष को मैनेजर रखते थे और जमीन से उत्पन्न कृषि पदार्थ से अपनी आवश्यकता पूर्ति करने के बाद उसे बेचते थे और उस पैसे का उपयोग जीवन की अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति में करते थे या फिर उन्हें सूद पर लगाते थे या जमा करते थे। उनसे उपर छोटे–छोटे जमींदार थे जिनकी संख्या बहुत कम थी। ये खेती की पूरी जिम्मेदारी वेतनभोगी मैनेजर पर छोड़े हुए थे और रईस की जिन्दगी जीते थे। यानी कुछ भी आर्थिक कार्यक्रम नहीं करके भोग विलास में रमे रहते थे। जमीन की लगान एवं बेगार वसूलना इनका काम था। यह काम वे अपनी वेतनभोगी मैनेजरों या नौकरों के द्वारा करवाते थे। छोटे–छोटे जमींदारों के पास कुछ जमीन ऐसी भी होती थी जिन पर प्रत्यक्ष तौर पर काम करके वे अनाज की आवश्यकता की पूर्ति करते थे। कुछ पर लगान की वसूली करते थे या करवाते थे। बड़े जमींदारों की भी यही स्थिति थी।

मध्यवर्गीय किसान मुख्य तौर से उन किसानों को मिलाकर बनते थे जिनके पास आजीविका चलाने के लिए प्र्याप्त भूमि तो थी ही उनसे उनको इतनी आय होती थी कि वे अपने जीवन की अन्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति कर सकें। वे सामाजिक तौर पर उँची जातियों से आते थे और गॉवों की आबादी के लगभग 40 प्रतिशत थे। इस श्रेणी में हम छोटे–छोटे जमींदारों को भी रख सकते है जो कहने मात्र को तो जमींदार थे परन्तु आर्थिक स्थिति के मामले में धनी किसानों के भी बदतर थे। ये सभी लोग आपनी खेती स्वयं तो करते ही थे परन्तु कृषि श्रमिकों को नकद या रकम देकर उनसे श्रम भी करवाते थे।[3]

गॉवों के बाहर बैठे बड़े–बड़े जमींदार खेती में सुधार की ओर से उदासीन थे क्योकि उनके पास इतनी अधिक जमीन थी कि उक्त अलाभकर खेती से भी उन्हें इतनी अधिक आमदनी होती थी कि वे पर्याप्त भोग–विलास की जिन्दगी जीने के काबिल थे। उदाहरणार्थ उत्तर बिहार में दरभंगा के महाराज रामेश्वर सिंह, जो मुगलों से 1556 में ही प्राप्त जमींदारी के वंशजों में से थे और जो मैथिल ब्राह्मण समुदाय के थे, के पास 450 वर्ग मील जमीन थी जी कि पूरे उत्तर बिहार के रकवा का 11 प्रतिशत थी। रामेश्वर सिंह को भूमि से लगान वसूली के बतौर लगभग 4,000,000 लाख रूपया प्रति वर्ष आता था।[4] दरभंगा महाराज के बाद बडे जमींदारों में हथुआ महाराज एवं बेतिया महाराज का स्थान था।[5] दरभंगा महाराज अपनी पूरी आमदनी का 10 प्रतिशत सरकार को भू राजस्व के बतौर देते थे और 10 से 15 प्रतिशत प्रशासनिक कार्यो पर खर्च करते थे। बाकी के पैसों का वे राजाओं एंव महाराजाओं की शान शौकत एंव भोग विलास की परम्परा के

अनुसार उन पर ही खर्च करते थे। यही हाल अन्य बडे जमींदारों का था।[6]

स्थायी बन्दोवस्त ने ही जमींदारों को जमीन का मालिक बना दिया था। इस तरह की व्यवस्था में ब्रिटिश इस्ट इण्डिया कम्पनी का उद्देश्य कम से कम मिहनत में अधिक से अधिक मुनाफा कमाना था। मुनाफा कमाने के क्रम में शोषितों की दशा की ओर से आँखें मूंदे रखना था जो पूँजीवादी साम्राज्यवादी व्यवस्था की उपज होती है।[7] स्थायी बन्दोवस्त की व्यवस्थाओं ने जमींदारों एवं धनी किसानों के हाथों में उन सारे अवसरों एवं उपकरणों को दे दिया जिनका उपयोग वे गरीब किसानों एवं मजदूरों के शोषण में करते। उसके साथ ही साथ इसने कृषि व्यवस्था को एक अनुत्पादक एवं अलाभप्रद आर्थिक उपक्रम बना दिया।[8]

स्थायी बन्दोवस्त के बाद की कानूनी व्यवस्थाओं ने उक्त प्रक्रिया को ही आगे बढाया था।[9] उदाहरणार्थ 1885 के टिनेन्सी कानून ने इसी प्रक्रिया को 1930 के दशक तक बरकरार रखने का प्रयास किया था।[10]

सन्दर्भ ग्रंथों की सूचीः–

1. रामनारायण सिन्हा– बिहार टिनेन्टरो, 1783–1883, बाम्बे, 1968
2. जे ब्राइन, बंगाल डिस्टिकट गजेटियरर्स, कलकत्ता, 1911
3. स्टीफेन हेनिंघम, पीजेन्ट मूभमेंट इन कोलोनियल इण्डिया, नार्थ बिहार, 1917–1947, पृ0 208–209
4. एल0 एस0 एस0 ओमेली, दरभंगा, पूर्वोक्त।
5. वही, सारण एवं चम्पारण।
6. वही।
7. रणजीत गुहा, ए रूल ऑफ प्रोपर्टी इन बंगाल, पेरिस, 1963, कलकत्ता, 1956, पृ0 616
8. रामनारायण सिन्हा, पूर्वोक्त, एस0 सी0 राय, लैण्ड रेभेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया, कलकत्ता, 1915, पृ0 38–45
9. वही, पृ0 43–45
10. अरविन्द एन दास, अग्रेरियन अनरेस्ट एण्ड सोशियो इकनामिक चेंज, 1900–1980, नई दिल्ली, 1983, पृ0–24